रूसी कहानी

वसेवोलोद गार्शिन

लाल फूल

hindikahani.hindi-kavita.com

लाल फूल (रूसी कहानी) : व्सेवोलोद गार्शिन

32–40 minutes

लाल फूल (रूसी कहानी) : व्सेवोलोद गार्शिन

Laal Phool (Russian Story) : Vsevolod Garshin

('लाल फूल' कहानी (1883) में अन्याय और बुराई के विरुद्ध संघर्ष का प्रतीकात्मक चित्रण है।)

(इवान तुर्गेनेव की पुण्य-स्मृति को समर्पित)

1

"महाराजाधिराज, सम्राट पीटर प्रथम की ओर से मैं सारे पागलख़ाने के निरीक्षण की घोषणा करता हूँ।"

ये शब्द ऊँची, तीखी और गूँजती आवाज़ में कहे गये थे। स्याही के धब्बों वाली मेज़ पर बड़े-से ख़स्ताहाल रजिस्टर में रोगी का ब्योरा दर्ज करने वाला मुंशी मुस्कुराये बिना न रह सका। किन्तु

रोगी को लेकर आने वाले दो जवान लोग नहीं हँसे - पागल रोगी के साथ, जिसे वे अभी-अभी रेलवे स्टेशन से लाये थे, बितायी गयी दो उनींदी रातों के बाद वे बड़ी मुश्किल से खडे रह पा रहे थे। आ़खिरी से एक स्टेशन पहले रोगी का पागलपन का दौरा तेज़ हो गया था। तब इन दोनों ने कहीं से पागलों को पहनाया जाने वाला कुर्ता हासिल किया और कण्डक्टर तथा फ़ौजी पुलिस वाले को बुलाकर उनकी मदद से उसे वह कुर्ता पहनाया। इसी हालत में वे उसे शहर और अस्पताल में लाये।

वह भयानक लग रहा था। पागलपन के दौरे के वक़्त बुरी तरह चिथड़े-चिथड़े कर दिये गये भूरे कोट पर वह खुले गिरेबानवाला गाढ़े का कुर्ता पहने था, जो उसके शरीर को बेहद कसे हुए था। कुर्ते की लम्बी आस्तीनें उसकी बाँहों को छाती पर टिकाकर पीठ-पीछे बाँध दी गयी थीं। उसकी सूजी और विस्फारित आँखों में (वह दस दिनों-रातों से नहीं सोया था) निश्चल चिंगारी-सी चमक रही थी, उत्तेजना से उसके अधर का सिरा फड़क रहा था, उलझे-उलझाये घुँघराले बाल अयालों की तरह उसके माथे पर गिर रहे थे, वह तेज़ और भारी क़दमों से दफ़्तर के एक कोने से दूसरे कोने तक आ-जा रहा था, काग़ज़ों-फ़ाइलों वाली पुरानी अलमारियों और मोमजामे से ढँकी कुर्सियों को पैनी नज़र से देखता था और कभी-कभी उसे यहाँ लाने वाले अपने साथियों पर दृष्टि डाल लेता था।

"इसे रोगियों के विभाग में ले जाइये। दायीं ओर।"

"मुझे मालूम है, मालूम है। मैं पिछले साल आपके यहाँ आया था। हमने अस्पताल का मुआयना किया था। मैं सब कुछ जानता हूँ और मुझे धोखा देना आसान नहीं होगा," रोगी ने कहा।

वह दरवाज़े की तरफ़ मुड़ गया। चौकीदार ने दरवाज़ा खोल दिया। अपने पागल सिर को ऊँचा उठाकर वह पहले जैसी तेज़, बोझिल और दृढ़ चाल से दफ़्तर से बाहर चला गया और लगभग भागते हुए पागलों के विभाग की तरफ़ दायीं ओर को बढ़ गया। उसे ले जाने वाले मुश्किल से ही उसका साथ दे पा रहे थे।

"दरवाज़े की घण्टी बजाओ। मैं ख़ुद ऐसा नहीं कर सकता। आप लोगों ने मेरे हाथ बाँध दिये हैं।"

दरबान ने दरवाज़ा खोला और ये लोग अस्पताल में दाख़िल हुए।

यह पत्थरों की बनी पुरानी सरकारी इमारत थी। दो बड़े हॉल - एक भोजनालय और दूसरा शान्त रोगियों के लिए साझा निवास स्थान, फुलवाड़ी सहित बाग़ में खुलने वाले शीशे के दरवाज़े वाला लम्बा दालान और बीसेक अलग-अलग कमरे जिनमें रोगी रहते थे - ऐसी थी इस इमारत की नीचे की मंज़िल। यहीं पर दो अँधेरे कमरे भी थे - एक की दीवारों पर गद्दे और दूसरे की दीवारों पर तख़्ते लगे थे। इनमें अत्यधिक उद्दण्ड रोगियों को बन्द किया जाता था और मेहराबों वाला एक अन्य बड़ा तथा

अँधेरा-सा कमरा ग़ुसलख़ाना था। ऊपर की मंज़िल में औरतें रहती थीं। वहाँ से अटपटा-सा ग़ुल-गपाड़ा, जिसके बीच-बीच में चीख़-चिल्लाहट भी गूँज उठती थी, नीचे सुनायी दे रहा था। अस्पताल अस्सी रोगियों के लिए था, लेकिन चूँकि आस-पास के कई गुबेर्नियाओं में यही एक अस्पताल था, इसलिए इसमें तीन सौ तक रोगियों को रखा जाता था। छोटे-छोटे कमरों में चार और पाँच-पाँच तक पलंग बिछा दिये गये थे। जाड़े में जब रोगियों को बाहर बाग़ में नहीं भेजा जाता था और लोहे के जंगलों के पीछे सभी खिड़कियाँ अच्छी तरह से बन्द कर दी जाती थीं, तो अस्पताल में असह्य उमस हो जाती थी।

नये रोगी को ग़ुसलख़ाने वाले कमरे में लाया गया। स्वस्थ व्यक्ति का मन भी यहाँ परेशान हो उठता और रोगग्रस्त तथा उत्तेजित मस्तिष्क पर तो यह और भी बुरा प्रभाव डालता था। यह मेहराबों, पत्थर के चिपचिपे फ़र्श और कोने में बनी एक ही खिड़की वाला बड़ा कमरा था, इसकी दीवारें और मेहराबें गहरे लाल रोग़न से पुती हुई थीं, गन्दगी से काले हुए फ़र्श पर ही पत्थर के दो हौज़, पानी से भरे दो अण्डाकार गड्ढे बने हुए थे। खिड़की के सामने वाले कोने में पानी गरम करने के लिए ताँबे का बहुत बड़ा कड़ाहा था और ताँबे की पाइपों तथा नलों की पूरी प्रणाली बनी हुई थी। सब कुछ पागल मस्तिष्क के लिए विषाद तथा उल्टी-सीधी बातें सोचने का वातावरण पैदा करता था और मोटा, हमेशा गुमसुम तथा मनहूस सूरत वाला चौकीदार, जो यहाँ ड्यूटी बजाता था, इस प्रभाव को और भी तीव्र कर देता

था।

रोगी को जब ग़ुसल कराने और अस्पताल के बड़े डॉक्टर की चिकित्सा-विधि के अनुसार उसकी गुद्दी पर बड़ा-सा प्लास्टर लगाने के लिए इस भयानक कमरे में लाया गया, तो उसके होश-हवास उड़ गये और वह ग़ुस्से से तिलमिला उठा। बड़े अटपटे और एक से एक अधिक भयानक विचार उसके दिमाग़ में घूमने लगे। यह क्या है? यातनाघर? गुप्त रूप से दण्ड देने का स्थान जहाँ मेरे दुश्मन ने मेरा काम तमाम कर डालने का फ़ैसला किया है? शायद यह जहन्नुम ही है? आख़िर उसके दिमाग़ में यह ख़याल आया कि यहाँ उसे किसी तरह की यातना दी जायेगी। बेहद विरोध करने के बावजूद उसके कपड़े उतार दिये गये। बीमारी के कारण दोगुनी हो गयी ताक़त की बदौलत वह कई चौकीदारों को नीचे गिराता हुआ आसानी से उनके हाथों से निकल जाता था। आख़िर चार चौकीदारों ने उसे ज़मीन पर गिरा लिया और हाथों-पैरों से पकड़कर गुनगुने पानी में लिटा दिया। उसे वह उबलता-सा प्रतीत हुआ और पागल दिमाग़ में उबलते पानी तथा दहकते लोहे से यातना देने का असम्बद्ध और बिखरा-बिखरा-सा विचार कौंध गया। मुँह में पानी जाने के कारण उसे बार-बार उच्छू आ रही थी, वह अपने हाथों-पैरों को, जिन्हें चार चौकीदार कसकर पकड़े हुए थे, बहुत बेचैनी से पटक रहा था और हाँफते हुए ऐसी ऊल-जुलूल बातें कहता जा रहा था, जिनकी अपने कानों से सुने बिना कल्पना नहीं की जा सकती। उनमें प्रार्थना भी थी और अभिशाप भी। पूरी तरह से बेदम न हो

जाने तक वह चिल्लाता रहा और आख़िर दुख के कड़वे आँसू बहाते हुए उसने धीमे-से एक वाक्य कहा जिसका उसकी पहली बातों से कोई सम्बन्ध नहीं था -

"पावन, महासन्तापित गिओर्गी! अपना शरीर तुम्हारे हाथों में सौंप रहा हूँ। किन्तु आत्मा - नहीं, ओ नहीं।"

यद्यपि वह शान्त हो चुका था, तथापि पहरेदार उसे अब भी पकड़े हुए थे। गुनगुने पानी के ग़ुसल और रबड़ की बोतल में सिर पर रखी गयी बर्फ़ ने अपना असर दिखाया। किन्तु जब लगभग चेतनाशून्यता की स्थिति में उसे पानी से निकालकर प्लास्टर लगाने के लिए एक बड़े स्टूल पर बिठाया गया, तो उसकी रही-सही शक्ति और उन्मादी विचार मानो फट पड़े।

"किसलिए? आख़िर किसलिए?" वह चिल्ला उठा। "किसी का बुरा नहीं करना चाहता था मैं। किसलिए मेरी हत्या करना चाहते हैं? ओह-हो-हो, हे भगवान! दुहाई देता हूँ शहीदों के नाम की! तुम्हारी मिन्नत करता हूँ, छोड़ दीजिये मुझे..."

गुद्दी पर किसी चीज़ के दहकते स्पर्श से वह बहुत बुरी तरह छटपटा उठा। नौकर उसे क़ाबू में रखने में असमर्थ थे और उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या करें।

"कुछ भी नहीं हो सकता," कार्रवाई करने वाले फ़ौजी ने कहा। "इसे तो हटाना ही होगा।"

इन सीधे-सादे शब्दों से रोगी काँप उठा। "हटाना! क्या हटाना

होगा? किसे हटाना होगा? मुझे!" उसने सोचा और मानो मौत को अपने सामने देखते हुए आँखें मूँद लीं। फ़ौजी ने खुरदरे तौलिये को दो सिरों से कसकर पकड़ा और उन्हें ज़ोर से दबाते हुए तौलिये को तेज़ी से गुद्दी पर ऐसे ज़ोर से रगड़ा कि प्लास्टर और खाल की ऊपरी सतह भी उतर गयी और वहाँ रगड़ का लाल निशान रह गया। ऐसी कार्रवाई से होने वाला दर्द शान्त और स्वस्थ व्यक्ति के लिए भी असह्य होता और इस रोगी को तो ज़िन्दगी का अन्त ही प्रतीत हुआ। उसने हताश होकर पूरा ज़ोर लगाते हुए छूटने की कोशिश की, चौकीदारों के हाथों से निकल गया और उसका नंगा शरीर पत्थरों के फ़र्श पर लोटने लगा। उसने चीख़ना चाहा, मगर ऐसा नहीं कर सका। उसे बेहोशी की हालत में पलंग पर लाया गया और उसकी यह बेहोशी गहरी, मौत जैसी और लम्बी नींद बन गयी।

2

रात को उसे होश आया। सभी ओर ख़ामोशी थी। बग़ल वाले बड़े कमरे से निद्रामगन रोगियों की साँसों की ध्वनी सुनायी दे रही थी। कहीं दूरी पर रात-भर के लिए अँधेरे कमरे में बन्द कर दिया गया कोई रोगी एक ही अन्दाज़ में अजीब ढंग से अपने आप से बतिया रहा था। हाँ, ऊपर के नारियों वाले हिस्से से फटे-से मन्द नारी-स्वर में एक बेतुका-सा गाना सुनायी दे रहा था। रोगी इन ध्वनियों को सुनता रहा। वह बेहद कमज़ोरी महसूस कर रहा था और उसका अंग-अंग टूट रहा था। उसकी गर्दन में बहुत दर्द हो रहा था।

"मैं कहाँ हूँ? क्या हुआ है मुझे?" उसके दिमाग़ में ये सवाल आये। अचानक उसकी ज़िन्दगी का पिछला महीना बहुत ही साफ़ तौर पर उसके सामने घूम गया और उसे यह समझते देर न लगी कि वह बीमार है और उसे क्या बीमारी है। उसे कुछ अटपटे विचार, शब्द और हरकतें याद हो आयीं और वह सिर से पाँव तक काँप उठा।

"किन्तु, भला हो भगवान का, यह सब तो समाप्त हो गया, समाप्त हो गया!" वह फुसफुसाया और फिर से सो गया।

लोहे के जंगले वाली खुली खिड़की बड़ी इमारतों और पत्थर की मेंड़ के बीच की छोटी-सी गली की ओर खुलती थी। इस गली में कभी कोई नहीं आता था और वहाँ जंगली झाड़-झँखाड़ तथा बकाइन की झाड़ियाँ उग आयी थीं जिन पर इस समय ढेरों फूल खिले हुए थे... झाड़ियों के पीछे, खिड़की के बिल्कुल सामने, पत्थर की ऊँची, काली मेंड़ थी और उसके पीछे से बड़े बाग़ के वृक्षों की फुनगियाँ चाँदनी की किरणों में चमकती-दमकती दिख रही थीं। दायीं ओर अस्पताल की सफ़ेद इमारत थी जिसकी लोहे के जंगले वाली खिड़कियाँ भीतर से रोशन थीं। बायीं ओर मुर्दाघर की सफ़ेद, चाँदनी से चमकती हुई ठोस दीवार थी। खिड़की के लोहे के जंगले में से कमरे में चाँदनी छन रही थी, फ़र्श पर फैल रही थी और पलंग का एक भाग तथा मुँदी आँखों वाले रोगी के अत्यधिक क्लान्त एवं पीले चेहरे को रोशन कर रही थी। इस समय उसमें पागल जैसा कुछ नहीं था। यह तो अत्यधिक क्लान्त व्यक्ति गहरी, बोझिल नींद में सोया हुआ था,

किसी तरह के सपने नहीं देख रहा था, ज़रा भी हिलता-डुलता नहीं था और लगभग साँस नहीं ले रहा था। कुछ क्षणों के लिए वह अपनी पूर्ण स्मरण-शक्ति की चेतना अनुभव करता हुआ जागा मानो बिल्कुल स्वस्थ हो, लेकिन सुबह फिर पहले जैसा पागल ही बिस्तर से उठा।

3

"कैसी तबीयत है आपकी?" अगले दिन डॉक्टर ने उससे पूछा।

रोगी की इसी वक़्त आँख खुली थी और वह अपने पलंग पर ही लेटा हुआ था।

"बहुत अच्छी है।" उसने झटपट बिस्तर से उठते, स्लीपर पहनते और गाउन को झपटते हुए जवाब दिया। "बहुत ही अच्छी है! सिर्फ़ - यहाँ!"

उसने गुद्दी की तरफ़ इशारा किया।

"मैं गर्दन इधर-उधर मोड़ता हूँ तो दर्द होता है। लेकिन यह कोई बात नहीं। अगर आदमी इसे समझता है, तो सब कुछ ठीक है, और मैं समझता हूँ।"

"आपको मालूम है कि आप कहाँ हैं?"

"बेशक मालूम है, डॉक्टर। मैं पागलख़ाने में हूँ। लेकिन अगर आदमी इसे समझता है, तो उसे इस सबसे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। उसके लिए सब बराबर है।"

डॉक्टर टकटकी बाँधकर उसकी आँखों में देख रहा था। बहुत

बढ़िया ढंग से सँवारी गयी सुनहरी दाढ़ी और सुनहरे चश्मे के पीछे से झाँकती हुई शान्त, नीली आँखों वाला उसका सुन्दर चेहरा, जिसकी बहुत सार-सँभाल की गयी थी, स्थिर और अभेद्य था। वह बहुत ग़ौर से देख रहा था।

"आप मुझे ऐसे एकटक क्यों देख रहे हैं? जो कुछ मेरी आत्मा में है, आप उसे नहीं पढ़ पायेंगे," रोगी कहता गया, "किन्तु आपकी आत्मा में जो कुछ है, उसे मैं बिल्कुल साफ़ पढ़ रहा हूँ। आप यह बुराई क्यों करते हैं? किसलिए आपने क़िस्मत के मारों की यह भीड़ यहाँ जमा की है और इसे यहाँ रोके हुए हैं? मुझे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता - मैं सब कुछ समझता हूँ और शान्त हूँ - लेकिन दूसरे लोग? किसलिए ये सब यातनाएँ? जिस व्यक्ति ने यह प्राप्त कर लिया है कि उसकी आत्मा में महान विचार है, सारगर्भित विचार है, उसके लिए सब बराबर है कि वह कहाँ रहता है, क्या अनुभव करता है। यहाँ तक कि वह ज़िन्दा भी रहता है या नहीं... ठीक है न?"

"हो सकता है," डॉक्टर ने कमरे के कोने में कुर्सी पर इस तरह से बैठते हुए जवाब दिया कि वह रोगी को देख सके जो घोड़े के चमड़े के बड़े-बड़े स्लीपरों को फटफटाता और चौड़ी-चौड़ी लाल धारियों तथा बड़े-बड़े फूलों के छापे वाले सूती कपड़े के गाउन के छोर लहराता हुआ बड़ी तेज़ी से कमरे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक आ-जा रहा था। डॉक्टर का सहायक और रोगियों की देखभाल करने वाला दरवाज़े के पास तनकर खड़े थे।

"मेरे पास एक महान विचार है!" रोगी ने चिल्लाकर कहा। "और जब मैंने इसे पा लिया, तो ऐसा अनुभव किया मानो मेरा पुनर्जन्म हो गया हो। भावनाएँ अधिक तीव्र हो गयीं, मस्तिष्क ऐसे काम करता है जैसे पहले कभी नहीं करता था। जो कुछ पहले निष्कर्षों और अनुमानों के लम्बे मार्ग से प्राप्त किया जाता था, उसे अब मैं सहजज्ञान से जान लेता हूँ। दर्शनशास्त्र ने जिसकी कल्पना की है, मैंने वास्तव में उसे प्राप्त कर लिया है। मैं अपने भीतर ही इन महान विचारों को अनुभव करता हूँ कि समय और स्थान कपोल-कल्पना ही हैं। मैं सभी शताब्दियों में रहा हूँ। मैं स्थान के बिना सभी जगह रहता हूँ या कहीं भी नहीं रहता, आप जैसा चाहें कह सकते हैं। इसलिए मुझे इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि आप मुझे यहाँ रखते हैं या मुक्त छोड़ देते हैं, मैं आज़ाद हूँ या बन्दी हूँ। मैंने देखा है कि यहाँ मेरे जैसे कुछ और भी हैं। लेकिन बाक़ी भीड़ के लिए ऐसी स्थिति भयानक है। आप उन्हें क्यों मुक्त नहीं कर देते? किसे ज़रूरत है..."

"आपने कहा," डॉक्टर ने उसे टोका, "कि आप समय और स्थान की क़ैद से आज़ाद हैं। किन्तु यह माने बिना नहीं रहा जा सकता कि हम और आप इस कमरे में हैं और इस वक़्त" - डॉक्टर ने घड़ी निकाली - "सुबह के साढ़े दस बजे हैं और आज सन् 18... की 6 मई का दिन है। इसके बारे में क्या ख़याल है आपका?"

"कुछ नहीं। मेरे लिए सब बराबर है कि मैं कब और कहाँ हूँ। अगर मेरे लिए सब बराबर है तो क्या इसका यह मतलब नहीं कि मैं हमेशा और हर जगह हूँ?"

डॉक्टर व्यंग्यपूर्वक मुस्कुराया।

"अनूठा तर्क है," उसने उठते हुए कहा। "सम्भवतः आप ठीक कहते हैं। नमस्ते। सिगार लेना चाहेंगे?"

"आभारी हूँ।" रोगी रुका, उसने एक सिगार लिया, बेचैनी से उसका सिरा दाँतों से काट लिया। "यह सोचने में मदद देता है," वह बोला। "यह दुनिया, लघु ब्रह्माण्ड है। एक छोर पर क्षार हैं, दूसरे पर अम्ल... ऐसा सन्तुलन है इस संसार का जिसमें विरोधी तत्व एक-दूसरे को निष्प्रभावी करते हैं। नमस्ते, डॉक्टर!"

डॉक्टर आगे चल दिया। अधिकतर रोगी अपने बिस्तरों के पास तनकर खड़े हुए उसकी राह देख रहे थे। किसी भी संचालक-अधिकारी को अपने अधीनों से इतना अधिक मान-सम्मान नहीं मिलता जितना मनोरोग चिकित्सक को अपने पागल रोगियों से।

नया रोगी अकेला रह जाने पर बड़ी तेज़ चाल से कमरे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक चक्कर लगाता रहा। उसके लिए चाय लायी गयी और उसने बैठे बिना ही चाय के बड़े मग को दो बार मुँह से लगाकर उसे ख़ाली कर दिया और पलक झपकते में सफ़ेद डबल रोटी का बड़ा-सा टुकड़ा खा गया। इसके बाद वह कमरे से बाहर निकला और रुके बिना कई घण्टों तक अपनी तेज़ तथा बोझिल चाल से पूरी इमारत के एक सिरे से दूसरे सिरे तक आता-जाता रहा। बारिश हो रही थी और इसलिए रोगियों को बाहर बाग़ में नहीं जाने दिया गया था। डॉक्टर का सहायक जब नये रोगी को खोजने लगा, तो दूसरे रोगियों ने गलियारे के

सिरे पर उसकी तरफ़ इशारा किया। वह बाग़ के शीशे वाले दरवाज़े से मुँह सटाये हुए वहाँ खड़ा था और टकटकी बाँधकर फुलवाड़ी को देख रहा था। असाधारण रूप से चटक लाल रंग वाले पोस्त की एक ख़ास क़िस्म के फूल पर उसका ध्यान संकेन्द्रित था।

"कृपया अपना वज़न कर लीजिये," सहायक ने उसका कन्धा छूते हुए कहा।

और रोगी जब सहायक की ओर मुड़ा, तो वह डर के मारे पीछे हटता-हटता रह गया - रोगी की उन्मादी आँखें भयानक क्रोध और घृणा से दहक रही थीं। किन्तु डॉक्टर के सहायक को देखते ही रोगी ने फ़ौरन अपने चेहरे का भाव बदल लिया और एक शब्द भी कहे बिना, मानो वह गहरे विचारों में डूबा हुआ हो, चुपचाप उसके पीछ-पीछे चल दिया। वे डॉक्टर के कमरे में गये और रोगी अपने आप ही वज़न करने की छोटी-सी मशीन पर खड़ा हो गया। डॉक्टर के सहायक ने उसके नाम के सामने 109 पौण्ड लिख दिया। अगले दिन उसका वज़न 107 पौण्ड और तीसरे दिन 106 पौण्ड रह गया।

"अगर यही हाल रहा, तो वह ज़िन्दा नहीं रह पायेगा," डॉक्टर ने कहा और आदेश दिया जितना भी मुमकिन हो, उसे अच्छी तरह से खिलाया-पिलाया जाये।

किन्तु बेहतर ख़ुराक और रोगी की असाधारण भूख के बावजूद वह हर दिन अधिकाधिक दुबला होता जाता था और डॉक्टर का

सहायक अधिकाधिक कम वज़न दर्ज करता जाता था। रोगी लगभग नहीं सोता था और लगातार इधर से उधर चक्कर काटते हुए पूरा दिन बिताता था।

4

उसे इस बात की चेतना थी कि वह पागलख़ाने में है, यह भी जानता था कि वह रोगी है। कभी-कभी, जैसा कि पहली रात को हुआ था, दिन-भर लगातार तेज़ी से इधर-उधर घूमते रहने के बाद रात की ख़ामोशी में उसकी आँख खुल जाती, उसका अंग-अंग टूटता और सिर बेहद भारी होता, किन्तु उसे हर चीज़ की पूरी चेतना होती। शायद रात की नीरवता और धीमे प्रकाश में अनुभूतियों की अनुपस्थिति, और सम्भवतः कुछ ही समय पहले जागे व्यक्ति के मस्तिष्क की धीमी कार्यक्षमता कुछ ऐसा परिणाम सामने लाती थी कि ऐसे क्षणों में वह अपनी स्थिति को बिल्कुल स्पष्ट रूप से समझता था और मानो स्वस्थ होता था। किन्तु दिन निकलते ही, प्रकाश के आते और अस्पताल में जीवन की गतिविधियाँ आरम्भ होते ही अनुभूतियाँ उसे फिर से लहर की तरह अपने साथ बहा ले जातीं; रोगग्रस्त मस्तिष्क उनके रेले की ताब न ला पाता और फिर से पागल हो जाता। उसकी स्थिति सही सूझ-बूझ और बेतुकी बातों का अजीब मेल प्रस्तुत करती थी। वह समझता था कि उसके इर्द-गिर्द सभी रोगी हैं, किन्तु साथ ही उसे हर किसी में गुप्त रूप से अपने चेहरे को छिपाता हुआ या छिपे चेहरे वाला ऐसा व्यक्ति भी दिखायी देता जिसे वह पहले जानता था या जिसके बारे में उसने पहले पढ़ा अथवा

सुना था। अस्पताल में मानो सभी वक़्तों और सभी देशों के रोगी थे। यहाँ जीवित भी थे और मृत भी। यहाँ प्रसिद्ध और दुनिया के जाने-माने लोग तथा पिछले युद्ध में मारे गये और पुनर्जीवित हो उठे सैनिक भी थे। वह अपने को पृथ्वी की सारी शक्ति संचित कर लेने वाले जादू-टोने में बँधे घेरे में अनुभव करता और उन्मादी उद्दण्डता से अपने को इस घेरे का केन्द्र-बिन्दु मानता। अस्पताल के उसके सभी साथी एक कार्य की पूर्ति, पृथ्वी पर बुराई के उन्मूलन की ओर लक्षित एक विराट कार्य की सिद्धि के लिए, जिसकी वह अस्पष्ट-सी कल्पना करता था, यहाँ जमा हुए हैं। इस विराट कार्य का रूप क्या होगा, वह नहीं जानता था, किन्तु यह अवश्य अनुभव करता था कि इसे पूरा करने के लिए उसमें पर्याप्त शक्ति है। वह दूसरे लोगों के मनोभावों को पढ़ सकता था; चीज़ों में उनके पूरे इतिहास को देखता था; अस्पताल के बाग़ में खड़े ऊँचे-ऊँचे एल्म वृक्ष उसे अपने अनुभूत जीवन की पूरी दास्तानें सुनाते थे; इमारत को, जो वास्तव में ही बहुत पुरानी थी, वह पीटर महान के समय में निर्मित मानता था और उसे विश्वास था कि ज़ार पीटर महान पोल्तावा की लड़ाई के वक़्त इसमें रहा था। उसने यह सब दीवारों, गिरे हुए प्लस्तर और बाग़ में उसे मिली ईंटों और टाइलों के टुकड़ों पर पढ़ा; उन पर इस इमारत और बाग़ की पूरी कहानी लिखी हुई थी। उसने कभी के मर चुके दसियों और सैकड़ों लोगों को अस्पताल के छोटे-से शवगृह में बसा दिया, उसके तलघर से बाग़ के कोने में खुलने वाली छोटी-सी खिड़की को वह टकटकी बाँधकर देखता

रहता और उसके पुराने, रंगीन तथा गन्दे शीशे के टेढ़े-तिरछे प्रतिबिम्ब में ऐसे चेहरे देखता रहता जिन्हें उसने या तो कभी जीवन में या चित्रों में देखा था।

इसी बीच मौसम साफ़ और सुहाना हो गया। रोगी बाग़ और खुली हवा में पूरा दिन बिताते थे। बाग़ में उनके घूमने के लिए निर्धारित भाग बड़ा नहीं था, किन्तु उसमें ढेरों वृक्ष थे और हर सम्भव स्थान पर फूलों के पौधे लगे हुए थे। रोगियों की निगरानी करने वाला हर उस रोगी को, जो कुछ भी श्रम कर सकता था, यहाँ काम करने को मजबूर करता था। वे दिन-भर बाग़ के संकरे पथों को बुहारते, उन पर बालू बिछाते, अपने हाथों से बनायी फूलों की क्यारियों और अपने द्वारा उगाये गये खीरों, तरबूज़ों और ख़रबूज़ों के बग़ीचे की निराई तथा सिंचाई करते। बाग़ के कोने में चेरी के बहुत-से पेड़ उगे हुए थे, उनके साथ-साथ ही एल्म वृक्ष की वीथी फैली हुई थी, इसके बोचोबीच छोटे-से कृत्रिम टीले पर इस बाग़ की सबसे सुन्दर पुष्प-वाटिका थी। इसके ऊपरी भाग के किनारों पर चटकीले फूल खिले हुए थे और उनके मध्य में लाल चित्तियों वाला पीले रंग का बहुत बड़ा और दुर्लभ डाहलिया वाटिका की शोभा बढ़ा रहा था। वह सारे बाग़ का केन्द्र-बिन्दु था, उसके ऊपर उठा हुआ था और यह भी देखा जा सकता था कि अनेक रोगी इसे कोई रहस्यपूर्ण महत्त्व प्रदान करते थे। नये रोगी को भी वह कुछ असाधारण और बाग़ तथा इमारत का रक्षक-सा प्रतीत हुआ। सभी संकरे मार्गों पर भी रोगियों ने ही पौधे लगाये थे। यहाँ उक्रइना में पाये जाने वाले

लगभग सभी फूल - ऊँचे पौधों वाले गुलाब, चटकीले पेटून, गेंदे, जलकुम्भी और पोस्त - देखे जा सकते थे। यहीं, ओसारे के निकट ही पोस्त के फूलों की एक ख़ास क़िस्म की तीन झाड़ियाँ उगी हुई थीं। यह फूल पोस्त के आम फूलों की तुलना में कहीं छोटा था और असाधारण रूप से चटक लाल रंग के कारण उनसे भिन्न था। अस्पताल में आने के पहले दिन ही रोगी ने जब शीशे के दरवाज़े में से बाग़ में झाँका था, तो इसी फूल ने उसे चकित किया था।

पहली बार बाग़ में जाने पर तथा ओसारे की सीढ़ियों से नीचे उतरे बिना उसने पोस्त के इन चटक फूलों की ओर ही सबसे पहले ध्यान दिया। ये सिर्फ़ दो फूल थे - संयोग से वे दूसरे फूलों से अलग तथा ऐसी जगह पर उगे हुए थे जिसे साफ़ नहीं किया गया था और इसलिए घनी जंगली घास तथा कुछ झाड़ियाँ इन फूलों को घेरे हुए थीं।

एक के बाद एक रोगी दरवाज़े से बाहर निकलता था। दरवाज़े के क़रीब चौकीदार खड़ा था जो हर रोगी को सूती धागों से बुनी हुई एक टोपी देता जाता था। टोपी के अग्रभाग पर रेड क्रास का निशान बना हुआ था। ये टोपियाँ मोर्चे पर हो आयी थीं और इन्हें नीलामी में ख़रीदा गया था। किन्तु रोगी, जैसा कि ज़ाहिर है, रेड क्रास के निशान को एक विशेष, रहस्यपूर्ण महत्त्व देता था। उसने सिर से टोपी उतारी, रेड क्रास और इसके बाद पोस्त के फूलों की तरफ़ देखा। फूल अधिक चटकीले थे।

"अभी तो जीत इसकी है," रोगी ने कहा, "लेकिन बाद में देखा जायेगा।"

और वह ओसारे से नीचे उतरा। उसने इधर-उधर नज़र दौड़ायी, अपने पीछे खड़े चौकीदार को न देख पाया, क्यारी लाँघी, फूल की तरफ़ हाथ बढ़ा दिया, मगर उसे तोड़ लेने का निर्णय नहीं कर सका। उसे अपने बढ़े हुए हाथ में आग-सी दहकती और काँटे-से चुभते प्रतीत हुए। कुछ देर बाद उसे सारे शरीर में ही कुछ ऐसी अनुभूति हुई मानो लाल पँखुड़ियों में से कोई ऐसी ज़ोरदार विद्युत-तरंग निकल रही थी, जिससे वह अज्ञात था, और उसके समूचे शरीर में घुसती चली जा रही थी। वह कुछ और निकट हो गया और उसने फूल की तरफ़ हाथ बढ़ा दिया। किन्तु, जैसा कि उसे प्रतीत हुआ, फूल ज़हरीली और जानलेवा साँसें छोड़ता हुआ अपनी रक्षा कर रहा था। उसका सिर चकराने लगा, उसने पूरा ज़ोर लगाकर अन्तिम प्रयास किया, उसकी डण्डी को पकड़ भी लिया कि अचानक किसी का भारी हाथ उसके कन्धे पर टिक गया। चौकीदार ने उसे रोक दिया।

"फूल तोड़ना मना है," बूढ़े उक्रइनी चौकीदार ने कहा। "और क्यारी पर भी नहीं चलो। यहाँ तुम जैसे पागलों की कुछ कमी नहीं है - हर कोई एक फूल तोड़ेगा तो सारा बाग़ उजड़ जायेगा," रोगी का कन्धा थामे हुए ही चौकीदार ने दृढ़ता से कहा।

रोगी ने उसकी तरफ़ देखा, चुपचाप अपने को उसके हाथ से

मुक्त किया और बड़ी उत्तेजना अनुभव करता हुआ बाग़ की पगडण्डी पर चल दिया।

"ओह, क़िस्मत के मारे लोगो!" उसने सोचा, "तुम कुछ भी नहीं देखते, इस हद तक अन्धे हो चुके हो कि इसकी रक्षा करते हो। लेकिन चाहे कुछ भी क्यों न हो जाये, मैं इसका काम तमाम करके ही रहूँगा। आज नहीं, तो कल हम ज़रूर दो-दो हाथ करेंगे। अगर मैं मर भी जाऊँगा, तो भी क्या फ़र्क़ पड़ेगा..."

रोगी शाम तक बाग़ में घूमता, दूसरों से जान-पहचान और अजीब-सी बातें करता रहा। इन बातचीतों में हर बात करने वाला अटपटे और रहस्यपूर्ण शब्दों में व्यक्त किये गये अपने उन्मादी विचारों के उत्तर सुनता। रोगी कभी एक, तो कभी दूसरे साथी के साथ घूमता रहा और शाम होने पर उसे इस बात का और भी अधिक विश्वास हो गया कि, जैसा उसने अपने आप से कहा, "सब कुछ तैयार है"। जल्द, बहुत जल्द ही लोहे के सींख़चे टूटकर गिर जायेंगे, ये सभी क़ैदी यहाँ बाहर निकल जायेंगे, पृथ्वी के हर कोने में भाग जायेंगे, सारी दुनिया हिल उठेगी, अपना पुराना, जर्जर आवरण उतार फेंकेगी और नये, अनूठे सौन्दर्य में प्रकट होगी। फूल के बारे में वह लगभग भूल गया, किन्तु बाग़ से जाते और ओसारे की सीढ़ियों पर चढ़ते हुए घने अँधेरे में काली हो गयी और ओस से कुछ-कुछ भीग चुकी घास में उसे मानो दो लाल अँगारे से दिखायी दे गये। रोगी तब भीड़ से पिछड़ गया और चौकीदार के पीछे खड़ा होकर अनुकूल क्षण की प्रतीक्षा करने लगा। कोई भी यह नहीं देख पाया कि

कैसे वह क्यारी के ऊपर से कूदा, कैसे उसने फूल तोड़ा और उसे अपनी क़मीज़ के नीचे छिपा लिया। ताज़ा और ओस से भीगी पँखुड़ियों ने जब उसके शरीर को छुआ, तो उसका चेहरा पीला-जर्द हो गया और डर के मारे उसकी आँखें फैल गयीं। उसके माथे पर ठण्डा पसीना आ गया।

अस्पताल में बत्तियाँ जल गयीं। शाम के भोजन की प्रतीक्षा करते हुए अधिकतर रोगी अपने बिस्तरों पर जा लेटे और केवल कुछ बेचैन ही गलियारे और हॉलों में तेज़ी से इधर-उधर आते-जाते रहे। फूल छिपाये हुए रोगी भी उन्हीं में था। वह बहुत ज़ोर से छाती पर दोनों हाथ बाँधे हुए घूम रहा था। ऐसे प्रतीत होता था कि वह क़मीज़ के नीचे छिपे फूल को कुचलना, उसकी गर्दन तोड़ डालना चाहता था। दूसरे रोगियों के सामने आने पर वह उनसे दूर हटकर निकल जाता, उनके साथ अपनी क़मीज़ का सिरा तक छुआते हुए घबराता। "मेरे पास नहीं आइये, मेरे पास नहीं आइये," वह चिल्लाता। किन्तु इस तरह के अस्पताल में ऐसी चीख़-पुकार की ओर शायद ही कोई ध्यान देता है। उसकी चाल अधिकाधिक तेज़ होती जाती थी, डग अधिकाधिक बड़े होते जाते थे। वह एक, दो घण्टे तक ग़ुस्से से उबलता हुआ ऐसे ही घूमता रहा।

"मैं तुझे थकाकर चूर कर डालूँगा। गला घोंट दूँगा तेरा।"

वह दबी-घुटी और ग़ुस्से से भरी आवाज़ में कहता जाता था।

कभी-कभी वह दाँत पीसता।

भोजनालय में शाम का खाना परोस दिया गया। मेज़पोशों के बिना बड़ी-बड़ी मेज़ों पर रँगे और सुनहरे किये हुए लकड़ी के कई बड़े-बड़े प्याले रख दिये गये थे जिनमें बाजरे का पतला-पतला दलिया था। रोगी बेंचों पर बैठ गये, उन्हें कोटू की रोटी का एक-एक टुकड़ा दे दिया गया। आठ आदमी लकड़ी के चमचों से एक प्याले में से दलिया खाते थे। जिन रोगियों को बेहतर ख़ुराक दी जाती थी, उनके लिए अलग से खाना परोसा गया। चौकीदार ने हमारे रोगी को उसके कमरे में खाने के लिए बुला लिया। रोगी अपने भोजन को झटपट हड़प गया और उससे तृप्त न होकर भोजनालय में चला गया।

"मुझे यहाँ बैठ जाने दीजिये," उसने निगरानी करने वाले से कहा।

"क्या आपने भोजन नहीं किया?" निगरानी करने वाले ने कुछ प्यालों में कुछ और दलिया डालते हुए पूछा।

"मुझे बहुत भूख लगी है। मेरे लिए ख़ूब तगड़ा होना भी बहुत ज़रूरी है। ख़ुराक ही मेरा सहारा है। आप जानते ही हैं कि मैं बिल्कुल नहीं सोता हूँ।"

"खाइये प्यारे, खाइये। तारास, उनको चमचा और रोटी दे दो।"

रोगी एक प्याले के पास बैठ गया और उसने ढेर सारा दलिया और खा लिया।

"बस, काफ़ी है, काफ़ी है," निगरानी करने वाले ने आख़िर तब

कहा, जब सभी भोजन कर चुके थे, किन्तु हमारा रोगी प्याले के पास बैठा एक हाथ से चमचा भर-भरकर दलिया खाता जाता था तथा दूसरे हाथ को वह ज़ोर से छाती पर दबाये था। "बदहजमी हो जायेगी।"

"ओह, काश आपको मालूम होता कि मुझे कितनी ज़्यादा ताक़त की ज़रूरत है, कितनी ज़्यादा ताक़त की! विदा, निकोलाई निकोलायेविच।" रोगी ने मेज़ से उठते और निगरानी करने वाले से बहुत ज़ोर से हाथ मिलाते हुए कहा। "विदा!"

"कहाँ जा रहे हैं आप?" निगरानी करने वाले ने मुस्कुराते हुए पूछा।

"मैं? कहीं नहीं जा रहा हूँ। यहीं रहूँगा। लेकिन हो सकता है कि कल हमारी मुलाक़ात न हो। आपकी उदारता के लिए आभारी हूँ।"

और उसने एक बार फिर निगरानी करने वाले से तपाक से हाथ मिलाया।

उसकी आवाज़ काँप रही थी और आँखें छलछला आयीं।

"शान्त हो जाइये, प्यारे, शान्त हो जाइये," निगरानी करने वाले ने उत्तर दिया। "ऐसे बुरे-बुरे ख़याल क्यों ला रहे हैं दिल में? जाइये, जाकर लेट जाइये, ख़ूब अच्छी तरह से सो लीजिये। आपको ज़्यादा सोना चाहिए। अगर अच्छी तरह से सोयेंगे, तो जल्द ही अच्छे हो जायेंगे।"

रोगी सिसक रहा था। निगरानी करने वाले ने मुँह दूसरी ओर कर लिया, ताकि चौकीदारों को बचा हुआ भोजन जल्दी से उठा लेने का आदेश दे सके। आधा घण्टे बाद एक व्यक्ति को छोड़कर, जो कोने वाले कमरे में कपड़े उतारे बिना अपने पलंग पर लेटा हुआ था, अस्पताल में बाक़ी सभी लोग सो रहे थे। वह ऐसे काँप रहा था मानो उसे बुख़ार की जूड़ी चढ़ी हो और कसकर छाती को दबाये था, जो, जैसा कि उसे लग रहा था, अनसुने-अनजाने घातक ज़हर से भीगी हुई थी।

5

वह रात-भर नहीं सोया। उसने यह फूल इसलिए तोड़ा था कि इसे दिलेरी का ऐसा काम मानता था जो उसे करना ही चाहिए था। शीशे के दरवाज़े में से पहली नज़र डालते ही लाल पँखुड़ियों ने उसका ध्यान आकर्षित किया और उसे लगा कि इस क्षण से वह अच्छी तरह जान गया है कि उसे पृथ्वी पर कौन-सा कार्य सम्पन्न करना है। इस चटक लाल रंग के फूल में ही दुनिया की सारी बुराई संकेन्द्रित है। उसे मालूम है कि पोस्त से ही अफ़ीम बनायी जाती है और शायद इसी विचार से बढ़कर तथा भयानक रूप धारण करके उसे एक भयानक, काल्पनिक हौवा बनाने को मजबूर किया। उसकी नज़र में फूल सारी बुराई का मूत्र रूप था, निर्दोषों का जितना भी रक़्त बहा था, वह सब उसने अपने भीतर जज़्ब कर लिया था (इसीलिए तो इतना लाल था), मानवजाति के सारे आँसू, सारा ग़ुस्सा-गिला वह अपने भीतर समेटे हुए था। यह एक रहस्यपूर्ण और भयानक तत्व,

भगवान के बिल्कुल उलट, अरीमन था जिसने विनम्रता और मासूमी का रूप धारण कर लिया था। इसे तोड़ना और नष्ट करना एकदम ज़रूरी था। लेकिन इतना ही काफ़ी नहीं था - यह भी ज़रूरी था कि दम तोड़ते वक़्त वह दुनिया में अपनी सारी बुराई बाहर न निकाल पाये। इसीलिए तो उसने उसे अपनी छाती के साथ चिपका लिया था, इस तरह छिपा रखा था। उसे आशा थी कि सुबह होने तक फूल की सारी शक्ति समाप्त हो जायेगी। उसकी बुराई उसकी छाती में, उसकी आत्मा में चली जायेगी और वहाँ वह या तो पराजित हो जायेगा या विजयी। उसके विजयी हो जाने पर वह ख़ुद मिट जायेगा, मर जायेगा, लेकिन एक सच्चे योद्धा और मानवजाति के श्रेष्ठ सूरमा की तरह अपनी जान देगा, क्योंकि अभी तक किसी ने पृथ्वी की सारी बुराई के विरुद्ध एक बार भी संघर्ष करने का साहस नहीं किया था।

"दूसरों ने इसे नहीं देखा। मैंने देख लिया। क्या मैं इसे ज़िन्दा रहने दे सकता हूँ? नहीं, मर जाना बेहतर है।"

और वह लेटा-लेटा क्लान्त हो रहा था, काल्पनिक, अस्तित्वहीन संघर्ष से, मगर क्लान्त हो रहा था। सुबह को डॉक्टर के सहायक ने उसे बमुश्किल ज़िन्दा पाया। किन्तु इसके बावजूद, कुछ समय बाद उन्मादी उत्तेजना उस पर हावी हो गयी, वह उछलकर बिस्तर से उठा और अन्य किसी भी समय की तुलना में रोगियों तथा ख़ुद अपने से कहीं अधिक ऊँचे-ऊँचे और बेसिलसिला बातें करते हुए पहले की भाँति अस्पताल में इधर-उधर भागने

लगा। उसे बाग़ में नहीं जाने दिया गया। डॉक्टर ने यह देखकर कि उसका वज़न कम होता जा रहा है, वह सोता नहीं और लगातार इधर-उधर चक्कर लगाता रहता है, उसे अफ़ीम की बड़ी सूई लगाने का आदेश दिया। रोगी ने इसका विरोध नहीं किया - सौभाग्य से इस समय उसके उन्मादी विचार इस कार्रवाई के अनुरूप थे। जल्द ही उसकी आँख लग गयी, उन्मादी गतिविधि बन्द हो गयी और उसके तेज़ क़दमों की लय से जन्म लेने तथा निरन्तर उसका साथ देने वाली ऊँची ध्वनि उसके कानों से लुप्त हो गयी। वह ऊँघ गया और उसने हर चीज़, यहाँ तक कि दूसरे फूल के बारे में भी, जिसे उसे तोड़ना था, सोचना बन्द कर दिया।

किन्तु तीन दिन बाद उसने बूढ़े चौकीदार के सामने ही, जो उसे वक़्त पर रोक नहीं पाया, दूसरा फूल भी तोड़ लिया। चौकीदार उसके पीछे भागा। विजय का ऊँचा चीत्कार करते हुए रोगी अस्पताल में दौड़ गया, लपककर अपने कमरे में पहुँचा और उसने फूल को छाती पर दबा लिया।

"तुम फूल क्यों तोड़ते हो?" उसके पीछे भागकर आने वाले चौकीदार ने पूछा। किन्तु रोगी, जो सदा की भाँति छाती पर हाथ बाँधे हुए अपने बिस्तर पर लेटा था, ऐसी बेतुकी बातें करने लगा कि चौकीदार ने चुपचाप उसके सिर पर से रेड क्रास के निशान वाली टोपी उतारी, जिसे वह भागने की उतावली में उतारना भूल गया था, और वापस चला गया। काल्पनिक संघर्ष फिर से शुरू हुआ। रोगी यह महसूस कर रहा था कि फूल में से साँपों जैसी

लम्बी-लम्बी, रेंगती धाराओं के रूप में बुराई बाहर आ रही है, ये धाराएँ उसे अपने सर्पीले जाल में उलझा रही हैं, उसके सभी अंगों को दबाती और भींचती हैं और अपने भयानक तत्व को उसके सारे शरीर में उतारती जा रही हैं। वह अपने शत्रु को लगातार कोसता हुआ बीच-बीच में रोता और भगवान से प्रार्थना भी करता। शाम होने तक फूल मुरझा गया। रोगी ने काले हो गये फूल को पैरों तले रौंदा-कुचला, उसके बचे-बचाये भाग को फ़र्श पर से उठाया और उसे ग़ुसलख़ाने में ले गया। आकारहीन-से गोले को कोयले से दहकती हुई भट्टी में फेंककर वह देर तक अपने शत्रु को सूँ-सूँ करते तथा सिमटते-सिकुड़ते देखता रहा। आख़िर वह राख का सफ़ेद बर्फ़ जैसा गोला बन गया। रोगी ने फूँक मारी और उसका अस्तित्व समाप्त हो गया।

अगले दिन रोगी की हालत और बिगड़ गयी। उसके चेहरे का रंग बेहद जर्द था, गाल धसक गये थे और जलती हुई आँखें गड्ढों में धँस गयी थीं। वह अब लड़खड़ाती चाल से, और अक्सर ठोकर खाते हुए अपना उन्मादी चलना-फिरना जारी रख रहा था और लगातार बोलताcाता जाता था।

"मैं बल-प्रयोग नहीं करना चाहता था," बड़े डॉक्टर ने अपने सहायक से कहा।

"लेकिन इस सिलसिले को बन्द करना तो ज़रूरी है। आज उसका वज़न 93 पौण्ड है। अगर आगे भी यही हालत रही, तो दो दिन बाद वह मर जायेगा।"

बड़ा डॉक्टर सोचने लगा।

"अफ़ीम? क्लोरल?" उसने मानो सवाल करते हुए कहा।

"कल अफ़ीम का कोई असर नहीं हुआ।"

"तो उसे बाँधने का आदेश दीजिये। वैसे मुझे बहुत कम आशा है कि वह बच सकेगा।"

6

और मरीज़ को बाँध दिया गया। वह पागलों का कुर्ता पहने और किरमिच के चौड़े पट्टों द्वारा कसकर पलंग से बँधा हुआ लेटा था। किन्तु उसके हिलने-डुलने का उन्माद कम होने के बजाय बढ़ ही गया था। अनेक घण्टों के दौरान वह अपने बन्धनों से मुक्त होने के लिए डटकर प्रयास करता रहा। आख़िर एक बार बहुत ज़ोर लगाने पर उसने एक पट्टा तोड़ डाला, टाँगों को मुक्त कर लिया, दूसरे पट्टों के नीचे से रेंगकर निकल आया। उसके हाथ बँधे रहे और वह वहशियाना तथा समझ में न आने वाली कुछ बातें कहता हुआ कमरे में इधर-उधर चक्कर काटने लगा।

"ओह, यह क्या है!" कमरे में आने वाला चौकीदार चिल्ला उठा। "लगता है शैतान ने तुम्हारी मदद की है! ग्रीत्स्को! इवान! जल्दी से आकर उसे बाँधो, इसने पट्टे खोल लिये हैं।"

वे तीनों रोगी पर झपटे और लम्बा संघर्ष शुरू हुआ जो चौकीदारों के लिए थकाने वाला और अपनी बची-बचायी क्षीण शक्ति को ख़र्च करने वाले रोगी के लिए यातनाप्रद था। आख़िर

उन्होंने उसे पलंग पर गिरा दिया और पहले से ज़्यादा कसकर बाँध दिया।

"आप लोग समझते नहीं कि क्या कर रहे हैं!" बुरी तरह से हाँफता हुआ रोगी चिल्ला रहा था। "आप लोग अपना नाश कर रहे हैं। मैंने तीसरा देखा जो ज़रा खिला ही था। अब वह तैयार हो चुका है। मुझे मामले को ख़त्म कर लेने दीजिये! उसे मारना, मार डालना चाहिए! मारना चाहिए! तब सब कुछ समाप्त हो जायेगा, सब कुछ बच जायेगा। मैं आप लोगों को ऐसा करने के लिए भेज देता, लेकिन यह काम तो सिर्फ़ मैं ही कर सकता हूँ। आप लोग तो उसके स्पर्श से ही मर जायेंगे।"

"चुप हो जाइये, जनाब, चुप हो जाइये!" रोगी के पलंग के निकट ड्यूटी बजाने के लिए रह जाने वाले बूढ़े चौकीदार ने कहा।

रोगी अचानक ख़ामोश हो गया। उसने चौकीदारों को चकमा देने का फ़ैसला किया। रोगी को दिन-भर बाँधे रखा गया और रात को भी ऐसे ही छोड़ दिया गया। उसे रात का भोजन कराने के बाद चौकीदार ने उसके पलंग के पास ही अपने सोने के लिए कुछ बिछाया और लेट गया। क्षण-भर बाद ही वह गहरी नींद सो गया और तब रोगी ने अपना काम शुरू किया।

रोगी ने अपने पूरे बदन को ऐसे झुकाया कि पलंग के बग़ल वाले लौह-डण्ड को छू सके और पागलों के कुर्ते की लम्बी आस्तीन में छिपी कलाई से उसे छूने के बाद आस्तीन को

जल्दी-जल्दी और ज़ोर से उसके साथ रगड़ने लगा। कुछ समय बाद किरमिच का मोटा कपड़ा फट गया और उसकी तर्जनी बाहर निकल आयी। इसके बाद काम तेज़ी से होने लगा। स्वस्थ व्यक्ति के लिए सर्वथा असम्भव फ़ुर्ती और लोच से उसने आस्तीनों को बाँधने वाली गाँठ को अपने पीछे से खोल लिया, कुर्ते को डोरियों से मुक्त किया और इसके बाद देर तक चौकीदार के खर्राटों पर कान लगाये रहा। किन्तु बूढ़ा गहरी नींद सो रहा था। रोगी ने कुर्ता उतार दिया और पलंग की क़ैद से अपने को छुड़ा लिया। वह अब मुक्त था। उसने दरवाज़े को खोलना चाहा, लेकिन वह भीतर से बन्द था और चाबी सम्भवतः चौकीदार की जेब में थी। इस डर से कि जेब से चाबी निकालते वक़्त चौकीदार की आँख न खुल जाये, उसने ऐसा करने की ज़ुर्रत नहीं की और खिड़की से ही बाहर जाने का निर्णय किया।

शान्त, गरम और अँधेरी रात थी। खिड़की खुली थी, काले आकाश में सितारे चमक रहे थे। उसने उनकी तरफ़ देखा, परिचित तारामण्डल को पहचाना और इस बात से ख़ुश हुआ कि वे, जैसा कि उसे लगा, उसे समझते हैं और उसके साथ सहानुभूति रखते हैं। आँखें मिचमिचाते हुए उसने उन अन्तहीन किरणों की ओर देखा जो वे उसकी तरफ़ भेज रहे थे और उसका उन्मादी संकल्प और अधिक दृढ़ हो गया। उसके लिए लोहे के जंगले की मोटी छड़ को हटाना, तंग-सी जगह में से बाहर निकलकर झाड़ियों से ढँकी गली में पहुँचना और पत्थर की ऊँची मेंड़ को लाँघना ज़रूरी था। वहाँ अन्तिम संघर्ष होगा और उसके

बाद - बेशक उसे मौत आ जाये।

उसने हाथों से ही छड़ को मोड़ने का प्रयास किया, किन्तु लोहा मुड़ा नहीं। तब उसने पागलों के कुर्ते की मज़बूत आस्तीनों की रस्सी-सी बनाकर उसे छड़ के सिरे पर भाले जैसी नोक में डाल दिया और अपने शरीर का पूरा ज़ोर लगाते हुए उसे खींचने लगा। बहुत ज़ोर लगाने पर उसकी रही-सही शक्ति को समाप्त करके वह नुकीली छड़ मुड़ गयी और बाहर निकलने की तंग-सी जगह बन गयी। वह सिमट-सिकुड़कर इसमें से बाहर निकल गया और ऐसा करते समय उसके कन्धे, कोहनियाँ और नंगे घुटने घायल हो गये। उसने झाड़ियाँ लाँघी और दीवार के सामने जा खड़ा हुआ। सभी ओर ख़ामोशी थी। कमरों में जलते रात के चिराग़ों की रोशनी खिड़कियों को हल्के-हल्के रोशन कर रही थी, खिड़कियों में कोई नज़र नहीं आ रहा था। उसे कोई नहीं देखेगा और उसके पलंग के पास ड्यूटी बजाने वाला बूढ़ा सम्भवतः गहरी नींद सो रहा था। सितारे बड़े प्यार से अपनी किरणों को झिलमिला रहे थे जो उसके हृदय की गहराइयों को छू रही थीं।

"मैं तुम्हारे पास आ रहा हूँ," आकाश को ताकते हुए वह फुसफुसाया।

दीवार को लाँघने की पहली नाकाम कोशिश में उसके नाख़ून छिल गये, हाथों और घुटनों से ख़ून बहने लगा तथा वह कोई अधिक अनुकूल स्थान ढूँढ़ने लगा। मुर्दाघर की दीवार जहाँ मेंड़ से मिलती थी, वहाँ मेंड़ और दीवार की कुछ ईंटें नीचे गिर गयी

थीं। रोगी ने इन गिरी ईंटों वाले स्थानों को छूकर उनके मज़बूत होने की तसल्ली की और फिर इन्हीं से काम लिया। वह मेंड़ पर चढ़ गया, उसने मेंड़ के दूसरी ओर उगे हुए एल्म वृक्ष की डालों को पकड़ लिया और धीरे-धीरे वृक्ष से ज़मीन पर उतर गया।

रोगी ओसारे के निकट अपनी जानी-पहचानी जगह की तरफ़ लपककर गया। पँखुड़ियों को समेटे हुए फूल का सिरा अँधेरे में काला-सा दिख रहा था और ओस भीगी घास में बिल्कुल अलग नज़र आ रहा था।

"आ़खिरी!" रोगी फुसफुसाया। "आ़खिरी! आज जीत या मौत! लेकिन मेरे लिए यह सब बराबर है। थोड़ा इन्तज़ार करो," उसने आकाश में सितारों को ताकते हुए कहा, "बहुत जल्द मैं तुम्हारे पास पहुँच जाऊँगा।"

उसने फूल तोड़ लिया, उसकी पँखुड़ी-पँखुड़ी अलग कर डाली, उसे नोच डाला और हाथ में लिये हुए उसी रास्ते से अपने कमरे में वापस आ गया। बूढ़ा चौकीदार सो रहा था। रोगी बड़ी मुश्किल से अपने पलंग तक पहुँचा और बेहोश होकर उस पर गिर गया।

सुबह होने पर उसके प्राण-पखेरू उड़ चुके थे। उसके चेहरे पर चैन और दीप्ति थी। पतले होंठों और गहरी धँसी हुई बन्द आँखों वाला उसका क्लान्त नाक-नक़्शा कुछ गर्वीले सुख को अभिव्यक्त कर रहा था। जब उसे स्ट्रेचर पर लिटाया गया, तो उसकी मुट्ठी खोलने और उसमें से लाल फूल निकालने की

कोशिश की गयी। किन्तु उसकी मुट्ठी अकड़कर ऐसे बन्द हो चुकी थी कि बहुत कोशिश करने पर भी नहीं खुली और वह अपनी जीत के इस पुरस्कार को अपने साथ लिये हुए ही क़ब्र में चला गया।

1883

अनु. - मदनलाल 'मधु'